International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
ISSN : 2581-9925, Impact Factor: 6.340, Volume 03, No. 02(II), April - June, 2021, pp.101-103

समकालीन समाज में ललित कलाओं की भूमिका

डॉ. लक्ष्मण लाल सरगडा*

प्रस्तावना

वर्तमान समाज बडे चमत्कारी ढंग से अपने भौतिक स्वरूप की रचना कर रहा है। आज एक ओर बुद्धिजीवि कहे जाने वाले वैज्ञानिक, इंजीनियर्स की फौज, निर्माण के क्षेत्र में कई विस्मयकारी ईमारतों, सड़कों, पुलों एवं ईंट–कंकरीट के निमार्ण को समाज के हर वर्ग तक पहुंचाने को प्रयासरत है, वही आधुनिक दवाईयों ने व्यक्ति की जीवन रेखा को बढ़ा दिया है। और यही वजह है कि समकालीन मनुष्य अपने भौतिक सुखों की ओर अत्यधिक ध्यानाकर्षित हुआ है। सिनेमा, संगीत, टी.वी., मोबाइल आदि ने मनुष्य के आनन्द की सीमाओं को कुछ हद तक भौतिक एवं शारीरिक पक्ष तक ही सीमित कर दिया है जिस कारण आम आदमी के आत्मिक आनन्द का रास्ता कुछ अवरूद्ध जरूर हुआ है किन्तु विलुप्त नहीं। शास्त्रों में कहा गया है कि कला विहीन मनुष्य पशु के समान है ''साहित्यसंगीत कलाविहीनः साक्षात् पशुसमानाः।'' तो क्या वास्तव में हम पशुता की ओर अग्रसर हो रहें हैं? जिस तरह की घटनाएं समाज में घट रहीं हैं इसी की ओर ईशारा कर रही हैं। वर्तमान की घटनाओं से यही साबित होता है, कि मनुष्य की मानसिकता बहुत विकृत हो गई है। आज के इस सुपरसोनिक युग में भी दुषित मानसिकता के लोग महिलाओं को मात्र उपभोग की वस्तु ही मान रहे हैं इसलिए आज के भारतीय समाज में बलात्कार घटनाएं घट रही हैं और आंतकवाद की राक्षसी प्रवृत्ति मानवता के नैतिक मूल्यों को नष्ट करने को तुली हैं। आप सोच रहे होंगे कि इन सब बातों का जिक्र इस कलात्मक लेख में क्यों किया जा रहा है तो इसका एक मात्र यही जवाब हैकि कलाकार एक सामाजिक प्राणी है और वह अपने सामाजिक दायित्वें को नकार नहीं सकता।

इन सभी परिस्थितियों के बीच जब हम समकालीन समाज के दायरे में ललित कलाओं की भूमिका की पड़ताल करते हैं तो बड़ा विचित्र सा परिदृश्य हमारे सामने प्रस्तुत होता है। यहां विरोधाभास का होना दिखाई पड़ता है ''कला, कला के लिए है या कला समाज के लिए है''। इस संसार में कोई ऐसी संस्कृति या सभ्यता नहीं हुई जिसका जन्म या पालन–पोषण कला की गोद में न हुआ हो। समकालीन समाज में ललित कलाओं की सार्थकता या भूमिका का विश्लेषणात्मक अध्ययन करना थोड़ा मुश्किल है क्योंकि अगर हम यह कहें की कलाएं मानव को सुसंस्कृत बनाती हैं तो आज समाज का इतना विकृत स्वरूप हमारे सामने न होता। आज ललित कलाओं का समाज पर पड़ने वाले प्रभाव का दायरा कुछ सीमित हो गया है और इसमें कोई अतिश्योक्ति नहीं। हम आज ललित कलाओं में भी चित्रकला, मूर्तिकला, संगीत, नाट्यकला आदि विधाओं के सामाजिक सरोकार को प्रतिशत के हिसाब से कम ज्यादा नाप सकते हैं क्योंकि परिस्थितियों के अनुरूप ही

* सहायक आचार्य, ड्राईंग एवं पेन्टिंग विभाग, एस.जी.जी. राजकीय महाविद्यालय, बाँसवाडा, राजस्थान।

इन सभी विधाओं का सम्प्रेषण समाज तक कम–ज्यादा मात्रा में पहुंचता है। यह सारी प्रक्रिया संचार साधनों की सुलभता एवं सामान्य लोगों के दायरे में आने की परिस्थिति पर निर्भर है। इसके अलावा भी एक मुख्य बात ललित कलाओं को रचने वाले कलाकारों के संदर्भ में है,और वह यह की कलाकार समाज के प्रति अपने नैतिक दायित्वों का निर्वाह अपनी कला के माध्यम से कितना करता है, कलाकार स्वयं कला निर्मति के समय दो वर्गों में विभाजित रहता है पहला तो वह किसी भी कलाकृति का सृजन स्वयं की आत्मिक शान्ति एवं तृष्णा को पूर्ण करने के लिए करता है, दूसरा कलाकार जो की एक सामाजिक प्राणी है अतः उसके कुछ नैतिक दायित्व बनते हैं कि वह समकालीन समाज के अच्छे व बुरे स्वरूप को अपनी कलाकृति के माध्यम से आम जन तक पहुंचाए। यह कलाकार पर निर्भर करता है कि वह एक कलाकार होने के नाते कितना सामाजिक सरोकार रखता है।

आज कलाओं ने समाज के ड्राईंग रूम को अपनी कलाकृतियों से सजाया है और आमजन को भी अपने सृजन के माध्यम से नवीन, अद्भूत एवं रहस्यमयी संसार का रसास्वादन कराया है। जिसके लिए समय के अनुरूप ललित कलाओं ने अपने परम्परागत स्वरूप में भी बदलाव किया। चित्रकला का आधुनिक रूप उसी का परिणाम है वहीं नाट्य कला का आधुनिक रूप सिनेमा, और इसका भी छोटा रूप टेलीविजन व मोबाइल है, शास्त्रीय संगीत के स्थान पर सुगम संगीत का जन्म इसी ओर ईशारा करता है कि परम्परागत कलाविधाओं में परिवर्तन एक निरन्तर घटने वाली वह प्रक्रिया है जो अच्छे व बुरे दोनो ही पक्षों को साथ लिये होती है । लेकिन वर्तमान में कलाओं के फ्यूजन का एक नया दौर ही चल पड़ा है जिसे देखो वह कलाओं की अभिव्यक्ति की सीमाओं को लांघते हुए मिक्स मीडिया के धरातल को अपनाते हुए अपनी रचनाधर्मिता कलाजगत के सम्मुख रखता जा रहा है। परन्तु ललित कलाओं की सभी विधाएं जैसे चित्रकला, नाट्यकला या फिर संगीत व साहित्य,जब अपनी सम्प्रेषणियता को सरल से सरल एवं मनोरंजकढंग से समाज के सामने रखने में सक्षम होगी तभी वह समकालीन समाज पर अपना असर छोड़ पाएगी। और इसका मुख्य उदाहरण सिनेमा एवं टेलीविजन है जो कि नाट्य कला का अतिआधुनिक रूप हैं। नाटक का वह प्राचीन रूप जो पूर्णरूपेण भारतीय साहित्य पर आधारित सामाजिक सरोकार को लिए हुए था आज उसका दायरा कुछ चुनिन्दा शहरों में स्थित रंगमंच तक ही सीमित हो गया है। नाटक का स्वरूप भी समय के अनुरूप बदला है लेकिन यह बदलाव कम ही है। आज भी एक अच्छे नाटक में मुख्य नायक के अभिनय को ही महत्वपूर्ण माना जाता है और नाटक को प्रस्तुत करने हेतु कम से कम उपकरणों एवं संसाधनों का उपयोग किया जाता है। जिस कारण आज नाटक की अपेक्षा सिनेमा अधिक लोकप्रिय है क्योंकि वहां दर्शक के लिए मनोरंजन हेतु अपार संसाधनों का उपयोग होता है । वहीं, चित्रकला की परम्परागत चित्रण शैलियां जैसे लघुचित्रण परम्परा, फड़चित्रण, कावड़ आदि का सामाजिक दायरा आज आधुनिक कही जाने वाली पीढ़ी के सामने सिकुड़ सा गया है और इसके विपरित आधुनिक कही जाने वाली कलाकृतियां आम जन के समझ से परे हैं जिसका कोई सामाजिक सरोकार नहीं । यही हाल संगीत का भी है लोग आज शास्त्रीय संगीत को सुनना पसन्द नहीं करते वरन सुगम संगीत की स्वरलहरियों में बहते चले जाते हैं क्योंकि शास्त्रीय संगीत समकालीन समय में केवल उन्ही लोगों को समझ में आता है जिन्होंने उसकी शिक्षा ली है या वो उसके पोषक हैं। इसी प्रकार की स्थितियां ललित कला की अन्य विधाओं की भी है।

इस प्रकार कलाओ का ये सारा परिदृश्य इस बात को साबित करता है कि समय के साथ परिवर्तन सभी दृश्य एवं श्रव्य कलाओं में आता ही है, देर से ही सही परन्तु आता जरूर है। उसकी सार्थकता समाज के लिए कितनी है या नही है, ये आज के इस युग में कह पाना मुश्किल है क्योंकि आज चित्रकार या मूर्तिकार 'वर्क ऑफ आर्ट' की नवीन विधा के तहत रोजमर्रा की किसी भी साधारण सी वस्तु को एक विशालकाय कलाकृति में परिवर्तित कर आम दर्शक को सरप्राईज करने में अपने उद्देश्य की पूर्ति मानने लगा है। ऐसे कलाकारों में हम समकालीन भारतीय कलाकार सुबोध गुप्ता का नाम ले सकते है जो घरेलू कार्यो हेतु उपयोग में आने वाली बाल्टी, लोटा, कडाई, चम्मच, थाली आदि को जोड़ कर विशालकाय मूर्तिशिल्पों का निर्माण कर पूरे विश्व में प्रसिद्धी पा लेता है। इसी कडी में समकालीन कलाकार ने 'साईट

पैसेफीक आर्ट' का एक नवीन दृष्टिकोण विकसित किया है जिसके तहत वह पुरी पृथ्वी व उसकी प्राकृतिक सम्पदा को अपना कैनवान मान कर उसे पुनः गढ़ने की चेष्टा कर रहा है । उसी तरह संगीत में भी कलाकार अलग–अलग क्षेत्रिय धुनों को एक साथ मिलाकार ऐसे संगीत की रचना करने में लगा है जो सर्वथा संगीत की मुख्य धारा से अलग हो और आम लोगो को सरप्राईज़ करने वाला हो। आज हर कलाकार चाहें वह किसी भी विधा से जुडा हुआ हो वह समकालीन कला समाज में अपने आप को एक प्रतिष्ठित स्थान पर स्थापित करने एवं लोकप्रिय होने की चाह में हमेशा नवीन रास्तो की खोज करने में लगा है और उसकी इस यात्रा का कोई अन्त नही।

अन्त में कहा जा सकता हैं कि आधुनिक कही जाने वाली हमारी आज की पीढ़ी को न्यूज पेपर तक पढ़ने की फुरसत नही होती तो वह हमारे साहित्य को कहां पढ़ने वाली है। आज के युवा की शुरूआत तो मोबाईल के साथ होती है और वही उसका मूड भी निश्चित करता है कि आज पूरे दिन वह क्या–क्या करेगा। ग्लोबलाईजेशन ने आज ललित कलाओं को समेट कर आम आदमी तक तो पहुचा दिया है लेकिन तकनीक के साथ संवेदनाओं का सामाजिक सरोकर कहीं दूर छूट गया जो समकालीन समाज एवं कला समाज की भयंकर त्रासदी है।

❖◆❖